International Journal of Academic Research and Development
ISSN: 2455-4197, Impact Factor: RJIF 5.22
www.academicsjournal.com
Volume 2; Issue 3; June 2017; Page No. 253-255

कन्हैयालाल मिश्र प्रभाकर के साहित्य में आधुनिकता में पिसता निर्धन व्यक्ति

संदीप कुमार

कुरूक्षेत्र विश्वविद्यालय, विभाग हिन्दी, हरियाणा, भारत।

प्रस्तावना

आधुनिकता के विषय में विभिन्न विद्वानों द्वारा शब्दकोषों में भिन्न–भिन्न विचार किए गए हैं। 'बृहत् हिन्दी कोष' में आधुनिक को "आजकल का, वर्तमान काल का, नए जमाने का।"1 माना गया है। 'मानक हिन्दी कोष' में आधुनिक शब्द के निम्नलिखित अर्थ बताए गए हैं –"1. जो इधर थोड़े समय से चला निकला या अस्तित्व में आया हो 2. जिस पर वर्तमान काल की बातों या विषेषताओं की पूरी छाप पड़ी हो।"2 "आधुनिक शब्द अधुना शब्द में इक् प्रत्यय के योग से निर्मित हुआ है जिसका शाब्दिक अर्थ है – वर्तमान समय का, हाल का, आजकल का, साम्प्रतिक, अधुनातन, नवीन, नव्य, अभी का, नया, इदानीम"[3] 'नालन्दा विषाल शब्द सागर' में आधुनिक को "अर्वाचीन, वर्तमान समय का, नवीन, साम्प्रतिक"[4] माना गया है। 'हिन्दी साहित्य कोष' में आधुनिक को परिभाषित करते हुए लिखा गया है – "सामान्य प्रयोग में आधुनिक शब्द को बहुत दूर तक समय सापेक्ष मान लिया जाता है। जैसे इतिहास का विभाजन प्राचीन, मध्यकालीन तथा आधुनिक कालों में करते समय, परन्तु यह 'आधुनिक' शब्द का सुविधा निष्पन्न और लचीला अर्थ है जिसके अनुसार हर अगला काल अपने पूर्ववर्ती की अपेक्षा आधुनिक या अधिक आधुनिक होता है पर अपने विशिष्ट रूप में आधुनिक का अर्थ इससे भिन्न होता है। आधुनिकता की पहली और अनिवार्य शर्त स्वचेतना है। इसके लिए साक्ष्य कई क्षेत्रों से प्रस्तुत किए जा सकते हैं। स्वयं इतिहास को यदि लिया जाए तो काल विभाजन के तुलनात्मक विवेचन से स्पष्ट हो सकेगा कि इतिहास के काल, समय की अवधि की दृष्टि से, धीरे–धीरे छोटे होते जा रहे हैं। युग प्रवृतियों का इतना शीघ्र परिवर्तन और उसका इतना इतना शीघ्र अनुभावन गहरी स्वचेतना द्वारा ही सम्भव है।"[5] भारतीय तथा पाष्चात्य शब्द कोष के अनुसार 'आधुनिक' शब्द के अलग–अलग अर्थ बताए गए हैं। भारतीय कोषों में आधुनिक को समय सापेक्ष माना गया है कि जो वर्तमान का है वह आधुनिक है और जो वर्तमान का नहीं है वह आधुनिक भी नहीं है। यह आधुनिक का संकुचित तथा शाब्दिक अर्थ है जिससे आधुनिक के भावार्थ तथा गहराई का पता नहीं चलता। 'हिन्दी साहित्य कोष' में तो इसको स्वीकारा भी गया है। पष्चिम में 'मॉडर्न' का अर्थ धर्म के आधुनिक सन्दर्भो के लिए किया गया है।

आधुनिक के सम्बन्ध में भारतीय दृष्टिकोण यह है कि परिवेषगत सतत् परिवर्तषील, युगानुरूप चेतना आधुनिक का प्रमुख आधार है। किसी भी युग में जो परिवेषगत परिवर्तन होता है, उस परिवर्तन को समझने तथा स्वीकार करने वाला आधुनिक कहलाता है। इस प्रकार आधुनिक का सम्बन्ध बुद्धि तथा चेतना से है।

आधुनिक युग प्रजातन्त्र का युग है। धीरे–धीरे लोग जागरूक हो रहे हैं। प्रभाकर जी को आभास हुआ है कि ये गरीब लोग दयनीय जीवन कब तक जीते रहेंगे। दूसरी और सारे देष का धन कुछ ही लोगों के पास है। ऐसी भेदभाव पूर्ण व्यवस्था में विद्रोह की आग दिखाई देने लग गई है। गरीबों के पास जब कोई भी उपाय नहीं बचेगा तो वे क्रान्ति के मार्ग पर कदम रखेंगे। उस समय पूँजीपति लोगों के सामने बड़ा खतरा पैदा हो जाएगा। आखिर कब तक दलित जीवन के लिए इन लोगों को विवष किया जा सकता है। धीरे–धीरे समाज में गरीबी के विरोध में आन्दोलन की सम्भावना नजर आ रही है। अभी से गरीबी से विद्रोह के लक्षण नजर आ रहे हैं। गरीब लोग धनी व्यक्तियों से होड़ लेने लगे हैं और व सोचने लगे हैं कि हम भी किसी से कम नहीं हैं।"मैं बाजार में जा रहा था। किसी कॉलेज के दो विद्यार्थी मेरे आगे–आगे जा रहे थे। एक पूरे जोष के साथ बोल रहा था, दूसरा सुन रहा था। वह कह रहा था – बहुत रईसी दिखाता था जैन। किसी को समझता ही न था। मैंने तीन महीने में उसकी पटरी ठीक बिछा दी। उसने बढ़िया सूट सिलवाया और क्लास में शान बधारने लगा। ठीक है उसके घर सोने–चाँदी का व्यापार है और मैं एक विधवा का लड़का हूँ, पर मैं उससे किसी बात में कम क्यों रहूँ? मैंने माँ से कह दिया कि तू रूपए नहीं देगी, तो मैं रेल के नीचे कट मरूँगा वह घबरायी और उसने भी वैसा ही सूट सिलवा दिया। .... मैं चौराहे से दूसरी तरफ चला गया, वे दूसरी तरफ चले गए, पर उसका यह वाक्य मेरे भीतर गूँज गया – 'मैं उससे किसी बात में कम नहीं हूँ!' यह गूँज इतनी तेज थी कि मेरे दूसरे सब विचार इसमें समा गए। मेरे रोम–रोम में एक आवाज थी – 'मैं उससे किसी बात में कम नहीं हूँ !' धीरे–धीरे इस गूँज में एक विचार उठा और वह इस गूँज पर छा गया – समाज में गरीबों को, युग–युगों से दलित होकर जीने वालों को, जो वृत्ति उद्वेलित कर रही है वह शान नहीं है, नवाबी नहीं है; वह तो गरीबी का विद्रोह है, जो फुँकार कर कह रही है कि कोई किसी से कम नहीं है। एक राष्ट्र के सभी नागरिक समान सम्मान के अधिकारी हैं। वास्तविक जीवन में यह समानता न मिले, तो असमानता से पीड़ित गरीब बाहरी रूप में अपनी समानता सिद्ध करेगा; बाहरी रूप में वह किसी से कम न रहेगा और इन विषिष्टिताओं के उपयोग का नाटक करेगा, जिनका शताब्दियों तक समाज के कुछ खास लोग ही उपयोग करते रहे हैं।"[6]

'वे दो चेहरे : एक देखा, तो दूसरा अनदेखा' निबन्ध में ढ़ाबों और चाय की दुकानों पर होने वाले बच्चों के शोषण पर तीखा व्यग्यं किया गया है। ये मालिक कच्ची आयु के लड़कों को नौकर रखते हैं, उन्हें मारते–पीटते हैं और उनकी क्षमता से अधिक काम लेते हैं तथा पूरा खाना भी नहीं देते। एक पण्डित जी अपने ढ़ाबे पर नौकर रखते हैं और उसका जमकर शोषण करते हैं। अपने कठोर–दिल मालिक के व्यवहार से परेशान होकर वह लड़का कड़ाके की सर्दी से बचने के लिए ग्यारह रूपए लेकर भाग जाता है ताकि वह कम्बल खरीद सके।

पण्डित जी चिल्लाते हैं, गालियां देते है, पुलिस में चोरी की रिपोर्ट लिखवाते हैं।

नारी सदैव पुरूष के शोषण का शिकार रही है। पुरूष ने उसे मात्र अपनी वासना–पूर्ति का साधन ही समझा है। डॉ0 नीलम गोयल के अनुसार – "घर और बाहर नारी का दैहिक शोषण एक सामान्य बात हो गई है। कहीं कोई चाचा, मामा अथवा परिवार का कोई सदस्य भोली–भाली और अविकसित आयु की अबोध बालिका का दैहिक शोषण करता है तो कहीं विवाह योग्य कुँवारी लड़की अपने ही संरक्षकों और अभिभावकों की वासना का शिकार बनती है। कहीं नारी पति–पुरूष की कूरता और पाश्विकता का शिकार है। वह अपनी स्वार्थ–सिद्धि, पदोन्नति के लिए अपनी पत्नी को दूसरों के आगे पेश करता है। यदि नारी विरोध करती है तो उसका परगामी पति उसे मानसिक तौर पर और शरीर की यातनाँए देकर उसे विक्षिप्त बना देता है। कहीं नारी अपने से दुगनी आयु के पुरूष को पति रूप में स्वीकार करती है तो वह पति अपनी उपस्थिति में अपने ही मित्र द्वारा उसका बलात्कार करवाता है। वह बेचारी अपने ही पति की अमानुशकता का शिकार होकर रखैल की जिन्दगी जीने पर विवश हो जाती है।"[7] आज भी देश में ऐसी घटनाएँ होती रहती हैं जिनमें नारियों को जबरदस्ती बाजारू कीचड़ में धकेल दिया जाता है। जहाँ अवैध रूप से देह–व्यापार चलता है उस विषय में सरकार भी मौन साध लेती है, क्योंकि सरकार में भी पुरूषों का ही बहुमत है। "सरकार पूर्ण रूप से शोषक वर्ग या पूँजीवादी वर्ग की समर्थक है। इस सरकार के पास कानून के हथकण्डे हैं लेकिन न्याय की कोई भावना नहीं है। सरकार में स्वयं स्वार्थपरता, शोषण एवं दलन की भावना ज्यादा होती है।"[8] को दिखाया गया है जो गरीब नारी को अपना शरीर बेचने के लिए विवष करता है। चोरी के आरोप में पति के जेल चले जाने पर बच्चों के पालन–पोषण के लिए वह मजदूरी करती है, लेकिन सेठ उसकी इज्जत के पीछे पड़ जाता है।

प्रभाकर जी समाज में बढ़ते शोषण को अपने निबन्धों में विभिन्न प्रसंगो द्वारा व्यक्त करते हैं –

"घटना को जानने के लिए मैंने पूछाः 'कहाँ हो गयी चोरी ?' जवाब मिला : 'अजी, चोरी क्या हो गई, कमाल हो गया। मैं सुबह शौच गया और कुएँ पर नहाया, बस इतनी देर में जाने कैसे बदमाश ने अलमारी खोल ली और चम्पत हुआ।' इतने में किसी ने पूछ लिया : 'बिस्तर–विस्तर नहीं ले गया भाई'? "छः बज गए। जेलखाना भी छः बजे ही बन्द होने लगता है। बैरक में बैठा बेचारा अपनी स्त्री को याद करके रोता होगा। वह तो रो–पीट कर अपने दिन काट ही लेगा, पर यह बेचारी क्या करें ? मेहनत–मजदूरी करेगी बेचारी और क्या? पर जवान औरत का मजदूरी करना भी एक आफत है। मजदूरी उसकी जो सेठ जी के हाथ अपनी आबरू बेचे। नहीं तो रात–दिन गाली खाए – हर तरह अपमानित हो। प्रलोभनों का जाल बेचारी पार कर भी जाए, तो चोबीसों घण्टे के अपमान को कैसे पिए ! पति जेल में पड़ा है और बच्चे भूखे हैं। सेठ जी हर समय पीछे पड़े रहते हैं। एक क्षण खुषामद का आता है और दूसरा क्षण गलियों का ! 'बर्तनों में मिट्टी लगी रहती है।' 'आवाज सुनती ही नहीं।' हराम की तनख्वाह लेना चाहती है।' वह क्या करे। बच्चों को भूखा मर जाने दे, आप भी मर जाए, या आपा लुट जाने दे। एक तरफ मातृत्व है, एक तरफ स्त्रीत्व। दोनों प्यारे। फिर यह घाटी कैसे पार हो ?"[9]

गरीब व्यक्ति गरीबी की अवस्था में से निकलना चाहते हैं तथा धनी व्यक्तियों की बराबरी करना चाहते हैं लेकिन वे उस स्थिति में पहुँच नहीं पाते। इसलिए वे धनी लोगों का अनुकरण कर उन जैसा दिखने का प्रयत्न करते हैं। वर्तमान युग में गरीबी को दूर करने की बातें तो अधिक की जाती हैं लेकिन वास्तव में उसको मिटाने का कार्य नहीं हो रहा है। आज गरीबी निरन्तर बढ़ती ही जा रही है। इसको रोकने का उपाय शासन की ओर से भी नहीं किया जा रहा। प्रभाकर जी ने भारतीय समाज में फैली गरीबी पर चिन्ता व्यक्त की है। जवाब मिला : मैंने सुसरे को कपड़े दिए ही कहाँ थे जो ले जाता। एक बोरी दे रखी थी, उस पर पड़ा रहता था और अपनी चादर ऊपर लपेट लेता था।' जवाब सुनकर मुझे बिजली–सी छू गया। मैंने अपने कपड़े गिने : बनियाइन, स्वेटर, गरम कुरता, बण्डी। मैं दिन में चार कपड़े पहने हुएं था और वह लड़का दिसम्बर की रात में एक चादर लपेट कर सो जाता था। उसे कैसी मीठी नींद आती होगी !!!.......? मैं खाना खाकर कण्ट्रोल की दूकान पर गया, तो पता चला कि आज एकदम सुबह फटे कपड़ों में एक लड़का कम्बल खरीद कर ले गया है। मेरा अनुमान अब विष्वास में बदल गया और यह घटना मेरे लिए अब एक गरीब, अनपढ़ और असहाय भारतीवासी के चरित्र का नमूना हो गयी।"[10]

मनुष्य ने मनुष्य का शोषण प्राचीन काल से ही किया है। शोषण में व्यक्ति के श्रम का लाभ उसे नहीं दिया जाता। पहले जमींदार लोग अपने किसानों का बहुत शोषण किया करते थे। अपनी जमीन पर खेती करवाते, घर का काम करवाते, उन्हें कौड़े मारते और पेट भरने के लिए पूरे पैसे भी नहीं देते थे। शोषण भी कई प्रकार से किया जाता है। कुछ परिस्थितियों में व्यक्ति को किसी काम के लिए विवष कर दिया जाता है और उसे वह कार्य न चाहते हुए भी करना पड़ता है। हमारे समाज में आजकल यौन शोषण भी बहुत हो रहा है। अबोध युवतियों को कुछ व्यक्ति अपने जाल में फँसाकर उनका खूब शोषण करते हैं। शोषण मनुष्य के स्वार्थ का परिणाम है। वर्तमान समय में भी मालिकों द्वारा अपने नौकरों का, मिलों में मजदूरों का, विभिन्न संस्थाओं में कर्मचारियों का शोषण होता रहता है।

"एक साधारण स्थिति का वैद्य, भगवान के दूत की भाँति पीड़ितों की सेवा में लीन था। वह बीमारों को दवा देता, उन्हें धीरज बंधाता और शोक की घटाएँ घिर आने पर, सान्त्वना देता। प्रलय की गर्मी, पहाड़ी रास्ते और रात दिन का यह श्रम – वह भी हैजे की झपेट में आ गया। मृत्यु उससे खेल रही थी, तब भी वह दूसरे बीमारों को दवा बांटे गया। पत्नी ने रोकर समझाया, बड़ों ने सीख दी, पर वह न माना। वही न माना तो मृत्यु क्यों मानती ! छत्तीस वर्ष की जवानी में वह मर गया, पर उसकी सेवा को आज भी उस प्रदेष के लोग याद करते हैं – 'अरे भाई, वैद्य तो हरीराम था, जो दूसरों की आई में खुद चला गया। आजकल के डाक्टर तो लुटेरे हैं लुटेरे !"[11]

कितना अन्तर आ गया है आज कि हरीराम जैसे वैद्य अपनी जान पर खेल कर दूसरों का इलाज करते थे और अब डाक्टर लोग पैसों के लिए दूसरों की जान से खिलवाड़ करते हैं, उनका शोषण करते हैं। आधुनिक समाज शोषण करने वाले व्यक्तियों से भरा पड़ा है। शोषण मानवता के प्रति एक अपराध है और यह अपराध आज सारे समाज में फैल गया है। आधुनिक युग में शोषण में अन्तर इतना हो गया है कि शोषण करने के तरीके बदल गए हैं। पहले की अपेक्षा आज शोषण अधिक हो रहा है।

आधुनिक युग में मनुष्य के व्यक्तित्व में बहुत परिवर्तन आया है। राजनीतिज्ञों तथा शासन–तन्त्र के अधिकारियों के झूठे आष्वासनों का प्रभाव निष्चित रूप से समाज पर पड़ रहा है।

हमारे समाज में दोहरे व्यक्तित्व वाला व्यक्ति "एक परिस्थिति में ईमानदार हो सकता है, सब परिस्थितियों में नहीं। वह एक अवस्था में मितव्ययी हो सकता है और दूसरी में फिजूल खर्च करने वाला।"[12] बहुत–से व्यक्ति समाज में बुराइयों पर व्याख्यान देते रहते हैं लेकिन वास्तविकता यह होती है कि वे स्वयं उस बुराई में आकंठ डूबे हुए होते हैं। कठोर–से–कठोर व्यक्ति भी दोहरे व्यक्तित्व के कारण स्वयं को दुनिया के सामने नम्र दिखाने में सफल हो जाता है और क्रूर–से–क्रूर व्यक्ति दयालु होने का अभिनय कुषलता से कर लेता है। दोहरे व्यक्तित्व के व्यक्ति अपराधों में आसानी से संलिप्त हो जाते हैं तथा कानून की पकड़ में नहीं आ पाते। लोगों को भड़काने में ऐसे व्यक्तियों की मुख्य भूमिका होती है। दोहरे आचरण वाला व्यक्ति किसी को भी धोखा दे सकता है। ऐसे व्यक्ति अपने आचरण के बल पर लोगों का जमकर शोषण करते हैं। नौकरी का लालच देकर या प्रेम का नाटक करके प्रतिदिन युवतियों का शारीरिक शोषण किया जाता है।

निष्कर्ष

पभाकर जी ने दोहरे आचरण के व्यक्तियों पर तीखा व्यंग्य किया है। 'चटखनी और बेड़ी' निबन्ध में ऐसे व्यक्ति का चित्रण है जो स्त्री–पुरूष की समानता पर बल देता है, परन्तु घर में नारी को गुलाम बनाकर रखना चाहता है। आधुनिकता की चादर ओढ़े हुए कुछ व्यक्ति रूढ़ियों में जकड़े रहते हैं। अनूपराम भी दोहरे व्यक्तित्व के व्यक्ति हैं। विधवा–विवाह का प्रचार करते वो कभी थके नहीं और इस प्रचार के कारण खूब प्रतिष्ठा अर्जित की, लेकिन यह सुधार स्वयं नहीं पचा सके। आधुनिक युग में सुधारवादी अधिक हैं सुधारकारी कम। ये सुधारवादी सुधार करने की अपेक्षा अपनी प्रसिद्धि के लिए हो–हल्ला अधिक करते हैं।

संदर्भ गर्थ

1. सं0 कालिका प्रसाद – 'बृहत् हिन्दी कोष', पृ0 126।
2. रामचन्द्र वर्मा – 'मानक हिन्दी कोष', पृ0 266।
3. रमाषंकर शुक्ल – 'भाषा शब्द कोष', पृ0 204।
4. श्री नवल जी – 'नालन्दा विषाल शब्द सागर', पृ0 127।
5. डॉ0 धीरेन्द्र वर्मा – 'हिन्दी साहित्य कोष – भाग–1', पृ0 86।
6. कन्हैयालाल मिश्र प्रभाकर – 'सतह से तह में', पृ. 44–45
7. डॉ. नीलम गोयल – 'स्वातन्त्र्योत्तर हिन्दी लेखिकाओं के उपन्यासों में अलगाव', पृ. 103।
8. राजेश्वर सक्सेना, प्रताप ठाकुर – 'भीश्म साहनी : व्यक्ति और रचना', पृ. 80।
9. कन्हैयालाल मिश्र प्रभाकर – 'भूले हुए चेहरे', पृ. 26–27।
10. कन्हैयालाल मिश्र प्रभाकर – 'जिन्दगी मुसकाई', पृ.। 130–131।
11. वही, पृ. 130।
12. नाथुराम षर्मा – 'मनोविज्ञान और मापन', पृ. 41।